प्रेम का बेशर्त स्वागत

जब तुम्हें किसी स्त्री में सौंदर्य दिखाई पड़ता है—या किसी पुरुष में—तो वस्तुतः तुम्हें क्या दिखाई पड़ा है? जब तुम्हें एक गुलाब के फूल में सौंदर्य दिखाई पड़ता है, तो क्या दिखाई पड़ा है? अगर ठीक से समझोगे, शांत मन बैठकर, ध्यानपूर्वक, तो तुम पाओगे : गुलाब में जो सौंदर्य दिखाई पड़ा है, वह पदार्थ का नहीं है। पदार्थ में परमात्मा की कुछ झलक हुई है।

इसलिये तो गुलाब के फूल को अगर तुम वैज्ञानिक के पास ले जाओ, तो वह विश्लेषण करके बता देगा कि उसमें सौंदर्य जैसी कोई चीज नहीं है। हां, कुछ रासायनिक द्रव्य हैं, खनिज इत्यादि हैं, पानी है, मिट्टी है। सब निकालकर अलग-अलग बोतलों में रख देगा। लेबल लगा देगा। तुम उससे पूछोगे : और सौंदर्य किस बोतल में है? वह कहेगा : सौंदर्य तो पाया नहीं। ये चीजें मिलीं; इन्हीं का जोड़ फूल था। और शायद कोई तर्कगत मार्ग भी नहीं है, उसे गलत सिद्ध करने का। लेकिन तुम भी जानते हो, मैं भी जानता हूं, वह भी जानता है—कि सौंदर्य था। सपना ही रहा हो, शायद, मगर था तो। दिखा तो था। उसे एकदम झुठलाया नहीं जा सकता। फिर कहां खो गया? पदार्थ के विश्लेषण में कहीं खो गया।

ऐसे ही, जैसे एक छोटा बच्चा नाच रहा है, किलकारी ले रहा है, हंस रहा है। और तुम उसे वैज्ञानिक के पास ले जाओ और वह बच्चे को काटपीट कर उसके भीतर खोजबीन करे, कि किलकारी कहां है! मुस्कान कहां है? यह जो आनंदभाव इस बच्चे में था, यह कहां है? हड्डी-मांस-मज्जा मिलेगी। सब मिल

जायेगा और, लेकिन किलकारी नहीं मिलेगी। वह मुस्कुराहट नहीं मिलेगी। वह जो बच्चे में जीवंतता थी, वह नहीं मिलेगी।

यह ऐसे ही है, जैसे तुम एक सुंदर कविता को गणितज्ञ या तार्किक के पास ले जाओ। वह, कविता के सारे शब्दों का विश्लेषण करके बता दे; उनकी मूल धातुयें खोजकर बता दे। व्याकरण के सब नियम समझा दे। छंद, गद्य, पद्य का सब, जो भी शास्त्र है पूरा, तुम्हारे सामने खोलकर रख दे, लेकिन फिर भी कुछ बात खो गयी। वह जो कविता का सौंदर्य था—खो गया।

कविता छंद नहीं है। और कविता मात्राओं का आयोजन भी नहीं है। सच तो यह है : कविता शब्द में ही नहीं है। शब्द में झलकती है, लेकिन शब्द से आती नहीं है।

ऐसे ही समझो कि जैसे लकड़ियों को रगड़ने से आग पैदा हो जाती है। लकड़ियों के रगड़ने से पैदा होती है। लेकिन आग लकड़ी नहीं है। लकड़ी से आती है—लकड़ी नहीं है। और मजा यह है कि अगर आग जलती रहे, तो लकड़ी को समाप्त कर देगी; लकड़ी को खा जायेगी; लकड़ी को पचा लेगी।

लकड़ी के बिना आग नहीं हो सकती, लेकिन फिर भी आग अलग है। ऐसे ही शब्दों के बिना काव्य नहीं होता, लेकिन काव्य अलग है। काव्य तो अग्नि जैसा है।

अगर व्याकरण, गणित, तर्क के नियम से खोजोगे, तो शब्द पकड़ में आयेंगे, काव्य खो जायेगा।

काव्य भाषा का हिस्सा ही नहीं है। ऐसे ही सौंदर्य पदार्थ का हिस्सा नहीं है; ऐसे ही सौंदर्य देह का हिस्सा नहीं है।

तो जब तुमने किसी स्त्री में सौंदर्य देखा, अगर तुम्हारी आंखें उज्ज्वल हों, अगर तुम्हारे भीतर समझ का दीया जलता हो, तो तुम पाओगे : यह परमात्मा की छवि झलकी। तुम स्त्री के प्रेम में न पड़ोगे; स्त्री के माध्यम से परमात्मा के प्रेम में पड़ोगे।

जब भी प्रेम हो, तो परमात्मा को खोजना; पदार्थ पर मत अटक जाना। पदार्थ पर अटके—तो वासना और परमात्मा की सूझ-बूझ मिलने लगे—तो प्रार्थना। पदार्थ पर अटके तो नीचे की तरफ गये—कीचड़ की तरफ और अगर परमात्मा की सुध-बुध स्मरण आने लगे, तो चले ऊपर की तरफ। पंख लगे तुम्हें। उड़े तुम आकाश की तरफ। अनंत की यात्रा पर निकले।

मैं जिस प्रेम की बात कर रहा हूं, वह इसी दृष्टि का नाम है।

पदार्थ में क्या सौंदर्य हो सकता है? शब्द में क्या सार हो सकता है? शब्द के पार से आता है सार। हां, शब्दों में झलकता है। जैसे दर्पण में कोई प्रतिबिंब झलकता है। जैसे रात आकाश में चांद-तारे हों, और झील में झलकते हों। मगर झील में झुबकी मत मार लेना—खोजने के लिये चांद-तारे। अभी जो चांद पर यात्री गये, वे अपना रॉकेट लेकर और झील में नहीं घुस जाते हैं। घुस जाते, तो कुछ न पाते। वहां चांद नहीं है। वहां सिर्फ चांद झलकता है।

इसलिये संसार को ज्ञानियों ने माया कहा है। यहां असली है नहीं—सिर्फ झलकता है। यहां असली स्वप्नवत है। यहां असली की परछाईं पड़ती है; प्रतिबिंब बनता है। यहां असली की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है। यह जो जगत में संगीत है, यह जो वीणावादक संगीत उठाता है, यह जो बांसुरी बजानेवाला जो संगीत जगाता है, ये प्रतिध्वनियां हैं—असली संगीत की। उस असली संगीत को संतों ने अनाहत नाद कहा है। इसलिये चीन में कहते हैं—पुरानी कहावत है—कि जब कोई संगीतज्ञ सच में ही संगीतज्ञ हो जाता है, तो वीणा तोड़ देता है। वीणा का क्या करना फिर? फिर तो संगीत भीतर उठता है। फिर तो भीतर जागता है। फिर तो वीणा की जरूरत ही नहीं रह जाती। न वीणा की—न वीणावादक की। फिर तो वाद्य के बिना संगीत उठता है।

कहते हैं : जब कोई चित्रकार अपनी कला में परिपूर्ण पारंगत हो जाता है, तो तूलिका फेंक देता है। फिर क्या जरूरत रही? अब तो परम सौंदर्य उस भीतर अनुभव होता है; प्रतिपल अनुभव होता है।

यह जगत छाया है; माया है। इस जगत में तुम्हारा जो प्रेम है, वह भी माया है; छाया है। मैं उस प्रेम की बात कर रहा हूं, जो आकाश में चांद जैसा है; झील में झलके चांद जैसा नहीं। मेरे प्रेम को तुम अपना प्रेम मत समझ लेना। और जब मैं यह कह रहा हूं, तब मैं तुम्हारे प्रेम की निंदा नहीं कर रहा हूं। मैं कह रहा हूं : प्रेम तो ठीक है, सिर्फ दिशा गलत है। इसी प्रेम को ऊर्ध्वगामी करो।

पूछा तुमने : कमोबेश सभी संतों ने प्रेम की महिमा बतायी है। लेकिन आपने प्रेम को गौरीशंकर पर आसीन कर दिया।

फर्क है। और संतों ने प्रेम के संबंध में जो कहा है, मेरे और उनके कहने में बुनियादी फर्क है।

संतों ने बड़े डरते-डरते कहा है; बड़े भयभीत होकर कहा है। कहना तो पड़ा है, क्योंकि सत्य का उन्हें अनुभव हुआ है। लेकिन तुम्हारी तरफ देखा है और तुम्हारे प्रेम के जंजाल को देखा है, तो बहुत सावधान होकर कहा है;

है; और तुम्हारे प्रेम को पहचाना है। और तुम्हारा प्रेम तुम्हें रोज नरक में उतारता जाता है। तो बहुत-बहुत सम्हालकर, बहुत शर्तबन्दी करके वक्तव्य दिये हैं। क्यों? क्योंकि यह सदा डर रहा है कि तुम गलत समझ लोगे।

लेकिन मैं जो तुमसे कह रहा हूं, तुम्हारे गलत समझने का जरा भी भय मुझे नहीं है। मुझे बात पूरी तुमसे कह देनी है—जैसी मुझे दिखाई पड़ती है। फिर तुम्हारी स्वतंत्रता—गलत समझो; ठीक समझो।

मैं तुम्हें औषधि दे देता हूं, फिर तुम इसका उपयोग बीमारी मिटाने में करोगे कि इस औषधि को ही खा-खा कर नयी बीमारी कर लोगे—यह तुम्हारी स्वतंत्रता है।

और इतने सोच-विचार के दिये गये वक्तव्यों का भी तो कोई परिणाम नहीं हुआ। जिन्हें गलत समझना था, उन्होंने गलत ही समझा। तब यह क्या फिक्र करनी; गलत समझनेवालों की क्या इतनी चिंता करनी? अगर मेरी बात गलत न समझेंगे, तो किसी और की बात गलत समझेंगे। गलत समझने का ही तय किया है, तो उन्हें कोई सही पर नहीं ला सकता है। उनके कारण, जो लोग सही समझ सकते हैं, उनके लिये मैं कोई अधूरे, अध-कचरे वक्तव्य नहीं दूंगा।

जब कोई संगीतज्ञ सच में ही संगीतज्ञ हो जाता है, तो वीणा तोड़ देता है। वीणा का क्या करना फिर? फिर तो संगीत भीतर उठता है। फिर तो भीतर जागता है। फिर तो वीणा की जरूरत ही नहीं रह जाती। न वीणा की-न वीणावादक की। फिर तो वाद्य के बिना संगीत उठता है

सौ में से अगर एक भी सही समझ लेगा, तो काम पूरा हो गया। वही आदमी काम का था। बाकी निन्यानबे तो गलत रहते ही—मेरी सुनते कि न सुनते। किसी और की सुनते कि न सुनते। वे जो भी सुनते, उसमें से गलत निकाल लेते।

आदमी जब सुनता है, तो अपने हिसाब से सुनता है।

तो मैं अगर डरते-डरते वक्तव्य दूं तो डर यह है कि वह सौ में से जो एक आदमी समझ पाता है, वह भी न समझ पाये। क्योंकि वक्तव्य अधूरा होगा। वक्तव्य देते वक्त अगर मैं संकोच करूं, शर्तबंदी करूं, सब तरह की सुरक्षा का उपाय करूं—कि कहीं कोई गलत न समझ लें, तो जिसको गलत समझना है, वह तो गलत समझेगा ही; लेकिन जो ठीक समझता था, वह भी इतनी शर्तबंदी में नहीं समझ पायेगा।

पुराने संतों ने—कहीं गलत न समझ लिये जायें—इसकी बहुत फिक्र की है। मेरी सारी फिक्र यह है कि जो ठीक समझते हैं, उतने थोड़े-से लोग समझ लें। बाकी की मुझे चिंता नहीं है। जिनने गलत समझने का तय किया है, वे गलत समझेंगे ही। उनकी मौज। मजे से समझें। जिंदगी उनकी है। वे जैसा उसका उपयोग करना चाहें, वैसा करें।

इसलिये प्रेम को मैं तो परमपद पर बिठाता हूं। मेरे लिये तो प्रेम ही परमात्मा है।

जीसस ने कहा है : परमात्मा प्रेम है। मैं कहता हूं—प्रेम परमात्मा है। परमात्मा को चाहे छोड़ दो—चलेगा। प्रेम को मत छोड़ना। क्योंकि प्रेम के बिना परमात्मा कभी नहीं मिला है। और जिसने प्रेम के पा लिया, उसे परमात्मा मिल ही गया।

इसलिये परमात्मा छोड़ा जा सकता है। प्रार्थना, प्रेम—वे नहीं छोड़े जा सकते हैं।

परमात्मा समस्त प्रेम के अनुभवों का अंतिम जोड़ है। और मैं तुमसे यह कह देना चाहता हूं कि जिस दिन तुम परमात्मा को पाओगे, उस दिन तुम यह भी पाओगे कि तुमने जो गलत-सही, नीचे जानेवाले, ऊपर जानेवाले—अनंत-अनंत काल में, अनंत-अनंत प्रेम किये थे, उन सबका जोड़ है परमात्मा। तुम्हारे गलत प्रेमों का भी जोड़ है।

प्रेम कितना ही गलत हो, लेकिन इसमें कोई किरण तो प्रेम की होती ही है। सोना कितना ही मिट्टी में मिल जाये, उसमें कुछ अंश तो सोने का होता ही है। निन्यानबे प्रतिशत मिट्टी हो जाये, तो भी एक प्रतिशत सोना तो होता ही है।

निन्यानबे प्रतिशत ईर्ष्या में भी जो प्रेम है, वह भी सोना है। हां, निन्यानबे प्रतिशत को धीरे-धीरे कम करो, सोने को धीरे-धीरे बढ़ाते जाओ।

प्रेम का मैं बेशर्त स्वागत करता हूं।

प्रेम ही है, जो इस जगत को चला रहा है। ये चांद-तारे प्रेम से बंधे चल रहे हैं।

— ओशो

कहै कबीर मैं पूरा पाया

अठारहवां प्रवचन, पहला प्रश्न

(पूरा प्रवचन टेप पर भी उपलब्ध है)